Study material for BA Part 2 philosophy Hons paper 3 2019 -20

Dr. Arti Kumari
Asso. Prof.
Deptt. Of Philosophy
B.N. College T. M.B.U, Bhagalpur

या अनुचित कहने के लिए एक मानदंड प्रस्तुत किया गया है। यदि कोई कार्य उस मानदंड के अनुकूल हो तो वह कार्य उचित और यदि कार्य उसके प्रतिकूल हो तो उसे अनुचित कहा जाता है। ये मानदंड नैतिकता के लिए आदर्श प्रस्तुत करते हैं जिस आदर्श पर चलकर कोई भी समाज एवं राज्य सुचारु रूप से गतिमान होता है ये नियम दो प्रकार के होते हैं —

(1) बाह्य नियम
(2) आंतरिक नियम

आंतरिक नियम बाह्य नियम के विपरीत अंतःकरण को नैतिक नियम के मानदंड के रूप में स्थापित करता है जिसके लिए व्यक्ति के अन्दर विवेक, इच्छा शक्ति का होना आवश्यक है जिसके आधार पर ही व्यक्ति Standard of law (नियम का मानदंड) स्थापित करता है।

इससे स्पष्ट है कि आंतरिक नियम के अनुसार नैतिकता के मानदंड के रूप में अंतःकरण की मूल भूमिका होती है जिसके आधार पर कर्मों के औचित्य का निर्धारण होता है।

बाह्य नियमवाद — बाह्य नियम वाद के अनुसार नैतिक आचरण के मानदंड के रूप में बाह्य नियमों को स्वीकार किया जाता है। इस कारण इस सिद्धान्त को बाह्य नियम (External law as standard of morality) अथवा वैधानिक नियम (legal theory) भी कहा जाता है।

बाह्य नियमवाद के अनुसार किसी

कार्य के औचित्य का निर्धारण बाह्य नियम से तुलना कर कि उसे नैतिक दृष्टि से उचित या अनुचित कहा जाता है। यदि कार्य नियम के अनुकूल होता है तो उचित और नियम के प्रतिकूल होने पर अनुचित होता है। इससे स्पष्ट है कि किसी कार्य की नैतिकता का आधार बाह्य नियम है न कि कोई कार्य अपने आप में उचित या अनुचित होता है।

बाह्य नियमवाद की विशेषताएं -

(1.) बाह्य नियम निरपेक्ष आदेश होता है क्योंकि ऐसे कार्यों में अनिवार्यता आवश्यक होती है। ये नियम राज्य, समाज या ईश्वर द्वारा प्रदत्त होते हैं। अतः इसे करना आवश्यक है।

(2.) बाह्य नियम चूंकि राज्य, समाज एवं ईश्वर का विधान है इसके साथ पुरस्कार या दंड की भावना सम्मिलित होती है। तात्पर्य यह है कि जब व्यक्ति इनके द्वारा बनाए गए नियमों के अनुकूल कार्य करता है तो उसे पुरस्कृत किया जाता है। जब वह इन नियमों के विपरीत कोई कार्य करता है तो उसे दंडित किया जाता है।

(3.) इस नियम की तीसरी विशेषता है कि बाह्य नियमों के कारण नैतिकता वस्तुनिष्ठ या विषयगत हो जाती है न कि ~~आत्मगत~~ आत्मनिष्ठ हो जाती है। इन नियमों में व्यक्ति पुरस्कार या दंड के कारण कार्य करता है ~~जबकि~~ नैतिकता के लिए स्वतंत्र कर्ता का होना आवश्यक है क्योंकि जब कर्ता स्वतंत्र होगा तभी उसके कर्मों पर नैतिक निर्णय दिया जा सकता है।

(4.) व्यक्ति स्वतंत्र कर्ता नहीं होता जिसके कारण इच्छा ~~शक्ति~~ शक्ति की अवधारणा का बाह्य नियमवाद में कोई स्थान नहीं होता।

जाता है। ये नियम है —

(1) सामाजिक नियम
(2) राजकीय नियम
(3) ईश्वरीय नियम

सामाजिक नियम :- कुछ विचारकों का मानना है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जन्म से मृत्यु तक वह समाज में रहता है क्योंकि उसके सारे कार्यों की पूर्ति समाज से ही होता है। इस कारण मनुष्य के कार्यों का मानदण्ड सामाजिक नियम भी हो सकता है। सामाजिक नियमों के अनुकूल कार्यों को उचित एवं सामाजिक नियमों के प्रतिकूल कार्य को अनुचित कहा जाता है। जो कार्य सामाजिक नियमों के अनुकूल होता है उसे सामाजिक अनुमोदन (Social Sanction) प्राप्त होता है। चूंकि यह समाज से अनुमोदित कार्य है अतः व्यक्ति उन कार्यों को करने के लिए बाध्य होता है क्योंकि यह समाज का आदेश है। बेन ने सामाजिक नियम की व्याख्या करते हुए कहा है कि नैतिकता एक सामाजिक संस्था है जिसका संरक्षण समाज की शक्ति तथा दंड विधान के द्वारा होता है। बेन के शब्दों में —

~~A moral act is an act~~

"Morality is an institution of society maintained by the authority and punishment of society."

समाज ... के आदेशों ... [illegible]
पालन करना भी सामाजिक व्यक्ति का कर्तव्य है। बेन ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि —

"A moral act is an act practised by prescribed by the social authority and rendered obligatory upon every citizen."

इससे स्पष्ट है कि सामाजिक नियम मनुष्य के लिए है तथा इनके अनुकूल कार्य ही नैतिक दृष्टि से उचित है। आवश्यकता है कि सामाजिक नियम का आदेश ही नैतिक निर्णय की परिधि में रखा जा सकता है। इस सिद्धान्त के समर्थकों का मानना है कि चूंकि सामाजिक नियम रीति-रिवाज एवं परंपराओं पर आधारित होता है इस कारण सामाजिक नियम के आदेश रीति-रिवाज एवं परंपराओं के अनुसार होते हैं।

2. राजकीय नियम - कुछ विचारक इस मत के हिमायती हैं कि राजकीय नियमों को ही नैतिक मानदण्ड के रूप में स्वीकार किया जाता है क्योंकि राज्य एक नैतिक एवं स्वाभाविक संस्था है जिसके द्वारा मानव का सर्वांगीण विकास संभव है। राज्य के नियम व्यक्ति के हित को ध्यान में रखकर ही बनाए जाते हैं अतः इन नियमों को मानना व्यक्ति का कर्तव्य है। इस तरह से राजकीय नियमों के अनुकूल कार्य उचित तथा इसके प्रतिकूल कार्य अनुचित होते हैं। राज्य के नियम या विधान के अनुकूल कार्य करके व्यक्ति [illegible]

कार्य करे [illegible] से कार्य करता है।
इस तरह व्यक्ति व्यवस्था के भय से कार्य करता है। हॉब्स के कहने के अनुसार सभी प्रकार के औचित्य एवं अनौचित्य का निर्धारण करने के लिए राजकीय नियम ही सर्वोत्तम न्यायालय है। हॉब्स ने इसे इस प्रकार स्पष्ट किया है

"The ~~civil~~ law alone is the ~~supre~~ supreme court of appeal in all cases of right and wrong."

ग्रीन ने भी इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि-

"Morality is in every respect analogous to civil government & the land of the land"

~~उपर्युक्त~~ उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि नैतिकता की सरकार अथवा देश के कानून से एकरूप है। राजकीय नियम इसलिए नैतिक आदेश हैं क्योंकि राज्य एक सर्वोपरि संस्था है जिसका निर्माण व्यक्ति की भलाई के लिए है। उसके द्वारा ही उचित और नैतिकता का निर्धारण होता है क्योंकि राज्य के बिना उचित या नैतिक कर्म का कोई महत्व नहीं है। उचित ही राजकीय आदेश है और अनुचित तो राज्य की निषेधाज्ञा है। हॉब्स का कहना है-

"व्यक्ति स्वभावतः स्वार्थी है, अतः वह अपने ही स्वार्थ से कार्य को उचित कहेगा तथा जब भी उसे अवसर मिलेगा तो वह दूसरे के स्वार्थ को कुचल देगा"।

नैतिक मापदंड के रूप में ईश्वरीय नियम
को शाश्वत नियम के रूप में स्वीकार किया गया है। कुछ
विचारकों के अनुसार सामाजिक नियम और राजकीय नियम
व्यक्ति द्वारा बनाई गई संस्था है। व्यक्ति द्वारा निर्मित होने
के कारण ये नियम शाश्वत और पूर्ण नहीं हो सकते, क्योंकि
व्यक्ति अपूर्ण, अल्पज्ञ, ससीम और भ्रांत है। इस कारण
इन विचारकों का अभिमत है कि ईश्वरीय नियम को ही
बाह्य नियमवाद के मानदंड के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।
ईश्वरीय नियम ईश्वर द्वारा निर्मित होने के कारण ये
नैतिक आदेश। दैवीय आदेश कहलाते हैं जिसके अनुसार
ईश्वर इन नैतिक आदेशों के अनुसार 'यह करो' तथा
'यह न करो' का आदेश देते हैं। ईश्वर के आदेश के अनुरूप
किए गए कार्य तथा उसके आदेश के प्रतिकूल किए गए कार्य को
अनुचित कहा जाता है। इससे स्पष्ट है कि ईश्वरीय आदेश
ही नैतिक या अनैतिक कार्यों का निर्धारक है। ईश्वर जगत
का कर्ता, धर्ता और हर्ता तीनों है। उसके द्वारा निर्मित
आदेश सर्वसाधारण के लिए होते हैं जिसमें किसी प्रकार
के पक्षपात की संभावना नहीं होती है। ईश्वरीय नियम
मानव कल्याण के अनुरूप ईश्वरीय आदेश हैं जिसमें
ईश्वर की ~~इच्छा~~ के आदेश के अनुरूप कार्य करने पर
पुरस्कार एवं उसके आदेश की अवहेलना करने पर दंड की
व्यवस्था है। इसे स्पष्ट करते हुए प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन
लॉक का अभिमत है कि —

"Divine law is the true touch-
stone of moral rectitude and

of their action.

जॉन लॉक के उपर्युक्त विश्लेषण से यह प्रतिध्वनित होता है कि ईश्वरीय नियम से ही कार्यों के आदर्श अस्तित्व को जाना जा सकता है जिससे तुलना कर मानव के कार्यों को उचित या अनुचित कहा जा सकता है। यहाँ सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि ~~ईश्वर~~ नैतिक मानदंड के रूप में नियम का निर्माण ~~करने के पीछे क्या कारण?~~ करने के पीछे ईश्वर का दृष्टिकोण क्या है? इस संबंध में ईश्वरीय नियम के समर्थक नीतिशास्त्रियों का मानना है कि चूंकि ईश्वर जगत का स्रष्टा है इसलिए उसने जगत का निर्माण करने के क्रम में सुव्यवस्थित रूप से विश्व-व्यवस्था को संचालित करने के लिए नैतिक नियमों का सृजन किया। जॉन लॉक अपनी पुस्तक An Essay Concerning Human Understanding में यह विचार व्यक्त किया है कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। वह सबको देखता है। अतः अच्छे व्यक्ति को पुरस्कृत करने एवं बुरे व्यक्ति को दंडित करने की यथार्थ शक्ति उसी में है कि—

"The true ground of morality is the will and power of a God who sees man in the dark, has in his hands reward and punishment and power enough to call to account the proceedes offender."[4]

आदेश नहीं कहा जा सकता क्योंकि मनुष्य इसका
पालन पुरस्कार या दंड के भय से करता है। सामाजिक
नियम में समाज के डर से, राजकीय नियम में राज्य द्वारा
निर्मित विधान के डर से तथा ईश्वरीय नियम में ईश्वर
के भय से व्यक्ति नैतिक कर्म करता है जिससे निरपेक्ष
आदेश नहीं कहा जाता है। यह आदेश सापेक्ष आदेश है
क्योंकि व्यक्ति नैतिक कार्य इसलिए करता है क्योंकि
2 उसके अनुकूल कार्य करने पर पुरस्कृत होगा तथा उसके
प्रतिकूल कार्य करने पर दंडित होगा।

(2) बाह्य नैतिक आदेश में इच्छा स्वातंत्र्य की अवहेलना
की गई है। किसी कार्य का औचित्य व्यक्ति के इच्छा
स्वतंत्र्य पर निर्भर करता है। यदि किसी कार्य को करने
में व्यक्ति की इच्छा सम्मिलित न हो उन कार्यों पर
नैतिक निर्णय नहीं दिया जा सकता।

(3) कांट जैसे दार्शनिकों का मानना है कि नैतिकता अपने
आप में साध्य है। इसे किसी का साधन नहीं बनाया
जा सकता है। उन्होंने कहा है — "Duty for duty's
sake." अर्थात् कर्तव्य कर्तव्य की भावना से होना
चाहिए न कि पुरस्कार और दंड के भय से।

(4) बाह्य नैतिक आदेश समय और स्थान के साथ परिवर्तन-
शील होते हैं क्योंकि प्रत्येक समाज एवं राज्य के अपने नियम
और विधान होते हैं। इसलिए ऐसे सामाजिक और राज्य
के नियम को शाश्वत मानदंड के रूप में स्वीकार नहीं किया

जा सकता। वर्तमान में जो नियम समाज एवं राज्य द्वारा मान्य है कल वे भी नियम राज्य शास्त्र में परिवर्तन के साथ बदल जाएंगे।

(5) बाल्य नियम में ईश्वरीय नियम आध्यात्मिक नैतिकता के मापदंड हो सकते हैं परन्तु व्यावहारिक या सामाजिक नहीं क्योंकि सामाजिक नैतिकता के लिए 'चाहिए' की भावना का होना आवश्यक है परन्तु ईश्वरीय नैतिकता ईश्वरीय आदेश है अर्थात् ऐसा करना पड़ेगा' जिसमें बाध्यता है अतः इसे नैतिक नियम नहीं कहा जा सकता।

(6) समाज और राज्य के नियम नैतिक मापदंड के रूप में सामाजिक आचरण के नियामक होते हैं जिन्हें शाश्वत नियम के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।